5

झरना क्यों रोती है?*

रेनु चौहान

आज के समय में पढ़ाई का क्या महत्त्व है, यह बात किसी से छुपी नहीं है। झरना कहानी भी आधारित है पढ़ाई के महत्त्व और एक अध्यापक की ज़िम्मेदारी पर। लेख में बताया गया है कि किताबी ज्ञान देने से परे अध्यापक के कुछ और भी कर्तव्य और दायित्व हैं, जिनका निर्वाह उसे पूरी ईमानदारी के साथ करना चाहिए। अध्यापक को जहाँ इस बात का ध्यान रखना होता है कि बच्चे की पढ़ाई में उन्नति हो रही है या नहीं, वहीं उसे उसके परिवेश को जानना भी अहम है क्योंकि विद्यार्थी की उन्नति या अवनति में उसके परिवेश का महत्वपूर्ण स्थान होता है।

कक्षा के आरंभ होते ही सबसे पहले अध्यापिका ने विद्यार्थियों से यह जानना चाहा कि क्या उन्होंने गृहकार्य कर लिया है। मॉनीटर ने एक-एक करके सबकी गृहकार्य की कॉपियाँ एकत्रित कर लीं। मॉनीटर ने अध्यापिका को बताया कि झरना आज भी अपना गृहकार्य नहीं करके आई है। आज तीसरा दिन है झरना न तो घर से काम करके आती है न ही कक्षा में ठीक से पढ़ाई की ओर ध्यान देती है। क्रोध के मारे अध्यापिका आग बबूला हो उठीं।

कड़क कर उन्होंने जब झरना से पूछा कि वो काम क्यूँ नहीं करके आई तो ठीक से उत्तर देने के स्थान पर आज भी उसने रोना शुरू कर दिया। इतना रोना कि रोते-रोते उसकी हिचकियाँ बँध गईं। परंतु, वो कोई संतोषजनक उत्तर नहीं दे पाई। अध्यापिका ने उसे कक्षा से बाहर निकाल दिया। अर्थात् गृहकार्य तो उसने किया नहीं था, कक्षा कार्य से भी वह वंचित रह गई। उसका आत्मविश्वास गिरता चला गया। थोड़े ही दिनों में उसके पास स्कूल छोड़ने के अतिरिक्त शायद कोई चारा न रह जाता, यदि अचानक एक दिन स्वैच्छिक संस्था की एक सक्रिय सदस्य नीतू दीदी स्कूल नहीं आ पहुँचती। यह संस्था शिक्षा के क्षेत्र में ही कार्य कर रही थी। तंग आई अध्यापिका ने झरना से संबंधित समस्या का ज़िक्र नीतू दीदी से किया। नीतू के

* लेख राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली द्वारा प्रकाशित पुस्तक '*काठ की घंटियाँ*' से साभार

बार-बार पूछने पर भी झरना खुल नहीं पायी।

उस शाम जब झरना स्कूल से घर की ओर जा रही थी तो नीतू दीदी उसके साथ हो लीं। रास्ते में उससे बातें करने लगीं। जैसे-कहाँ रहती हो? घर जाकर क्या करती हो? किस समय पढ़ती हो? क्या तुम्हारे पास कॉपी व किताबें सब हैं आदि। बातों-बातों में नीतू ने जाना कि ग्यारह वर्षीया झरना के माँ-बाप मजदूरी करते हैं, वे सुबह ही घर से निकल जाते हैं। घर से जल्दी निकल जाने व देर से आने के कारण माँ घर का कोई काम नहीं कर पाती और घर का सारा काम झरना करती है। उसमें लकड़ी बीनना, पानी लाना, खाना बनाना व दोनों छोटे बच्चों को खिलाना आदि सभी शामिल है। माँ-बाप के आने तक वह सारा खाना बनाकर रखती है। जब तक वह खाना आदि बनाकर निबटती है, बेहद थक चुकी होती है और अँधेरा भी घिर आता है। घर में बिजली नहीं है। ढिबरी अथवा लालटेन की रोशनी में वह पढ़ नहीं पाती।

झरना ने नीतू से बात करते हुए एक दिन की घटना का ज़िक्र किया और बताया कि एक दिन पढ़ाई करते हुए उसे किसी कारणवश घर से बाहर जाना पड़ा। जब वो लौटकर आई तो उसने देखा कि छोटे भाई ने उसकी कॉपी फाड़ कर चिंदी-चिंदी कर दी है। रोने के अतिरिक्त वो कुछ न कर पाई। बात बताते-बताते झरना एक बार फिर रो पड़ी। तब तक झरना का घर आ गया था। नीतू ने दोबारा आकर झरना के माँ-बाप से मिलने की बात कहकर विदा ली।

अगले दिन नीतू और अध्यापिका, झरना के माँ-बाप से मिले। अध्यापिका ने बताया कि झरना पढ़ाई में अच्छी है। उसका स्कूल नहीं छुड़ाना चाहिए। पिछले कुछ दिनों से वो पढ़ाई में ध्यान नहीं दे रही है। धीरे-धीरे जब समस्या माँ-बाप के सामने रखी गयी तो वो जैसे सोते से जगे हों। उन्हें पता ही नहीं था कि क्या हो रहा है। गनीमत है कि वो भी चाहते थे कि झरना स्कूल जाए और पढ़े। हो सकता है इसमें एक कारण स्कूल में अवकाश के समय मिलने वाला भोजन 'मिड-डे-मील' हो। बहरहाल, कारण जो भी हो, उन्होंने सहयोग करने का आश्वासन दिया। शायद घर के कुछ काम की ज़िम्मेदारी माँ-बाप ने ली हो। इससे झरना की स्थिति में सुधार हुआ। वह एक बार फिर से पढ़ाई में चमक उठी।

यह केवल एक उदाहरण था। ऐसे अनेकों उदाहरण हैं, जिनमें बच्चे के परिवेश को जाने बिना हम अपने ढंग से उन्हें पढ़ाते हैं। यही नहीं हमें उससे ढेरों अपेक्षाएँ भी होती हैं और हम यह भी नहीं सोचना व जानना चाहते कि जो जानकारी हम उसे देना चाहते हैं अथवा दे रहे हैं क्या वो उसके अनुकूल है?

यहाँ एक और उदाहरण देना चाहूँगी कि जिस बच्चे ने कभी खरहा और खग देखा न हो उसे 'ख' से खरहा अथवा खग पढ़ाना तथा अन्य बच्चों को 'ए' से एरोप्लेन तथा 'अ' से अनार पढ़ाना कहाँ तक उचित है। 'क' से कबूतर, कुँआ, काला, कमल सभी हैं। यह हम पर निर्भर करता है कि हम बच्चे को कहाँ से आरंभ कर कहाँ ले जाना चाहते हैं। वास्तव में ये हम पर नहीं बच्चे के परिवेश से मिली जानकारी नियत करेगी कि क्या व किस ढंग से

पढ़ाना है। पढ़ाना, हुबहू पाठ को पढ़कर सुनाना नहीं है वरन् उसका अर्थ बनाना, उसके संदर्भ को पकड़ना, अपने अनुभव उसमें जोड़ पाना तथा उसका आनंद लेना भी है। इस तरह की पढ़ाई में योगदान देने के लिए अध्यापक को बच्चे के तीनों प्रकार के परिवेश की जानकारी होना आवश्यक है तभी वो अपने कार्य में सफल होने की सोच सकता है। इसीलिए बच्चे के सांस्कृतिक, सामाजिक व आर्थिक परिवेश को जानना बहुत आवश्यक है। यहाँ परिवेश से हमारा मतलब है कि बच्चा कैसे परिवार से है, पारिवारिक आय तथा परिवार के सदस्य कितने हैं? पारिवारिक रोज़गार क्या है? क्या माँ भी नौकरी पर जाती है? घर का वातावरण कैसा है? क्या परिवार के सदस्यों में सामंजस्य है? पति-पत्नी में आपसी समझदारी कैसी है। क्या परिवार रूढ़िवादी, कट्टर, अंधविश्वासी है? किस धर्म व संप्रदाय से संबंध रखते हैं? किस प्रकार के संस्कार बच्चों को दिए जाते हैं? जैसे परिवार में बड़ों का सम्मान, लड़का-लड़की में भेदभाव, परिवार में महिला का सम्मान आदि। तीनों परिवेश आपस में संबंधित हैं तथा बच्चा इनसे अछूता नहीं रह सकता। परिवेश के अनुरूप ही पढ़ाई के ढंग व उसमें उदाहरणों का समावेश करना आवश्यक है। स्थानीय वस्तुओं, बोलियों, पर्वों, पकवानों व वातावरण से लिए गए उदाहरण उन्हें अधिक सटीक तथा आसानी से समझ आने वाले प्रतीत होंगे।

पहाड़ पर जाकर यदि हम वहाँ प्रायः दिखाई देने वाले पशु-पक्षियों, उनके व्यवहार व खान-पान की बात करेंगे तो बात सबको समझ आयेगी। यही कारण है कि प्रत्येक स्थान के अपने लोक गीत व लोक कथाएँ होती हैं जो बच्चों को अत्यंत प्रिय होती हैं। क्योंकि वे उनके दिल के करीब होती हैं। उन्हीं के वातावरण से चुनी गई होती हैं। यदि अध्यापक को वहाँ के परिवेश की जानकारी होगी तो उसकी पढ़ायी गई बातें व जानकारी उनके परिवेश में से निकल कर आयेगी। जो कि बच्चों को न केवल सुगमता से समझ आएंगी, अपितु उनके दिल के करीब होंगी। बिहार व झारखण्ड के गाँवों में यदि दीपावली के स्थान पर उनके स्थानीय पर्व छठ पर्व व सुरगुल तथा धासुकों व मालपुए जैसे पकवानों की बात की जाए तो यकीनन बात न केवल सभी बच्चों को समझ आ जायेगी, अपितु बात उनके होठों पर मुस्कान व आँखों में चमक भी ले आयेगी।

यदि हमें अपने लक्ष्य की जानकारी हो तो यकीनन हम बेहतर ढंग से व अधिक आत्मविश्वास से अपने लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं। शिक्षा प्रणाली को हम नहीं बदल सकते, लेकिन किस ढंग से पढ़ना है, किस ढंग से बच्चे को समझना व समझाना है, यह बदल सकते हैं, क्योंकि इसमें हमारी महत्वपूर्ण भूमिका है। यहाँ एक बात और ध्यान देने योग्य है कि परिवेश की जानकारी को हमें भ्रांतियों के रूप में भी नहीं लेना है। कई लोग यह मानकर चलते हैं कि गरीब विद्यार्थी का आई क्यू भी कम होगा। यह सोच सही नहीं है। हो सकता है उसके पास साधनों की कमी हो, परंतु उसी अनुपात में सोचने, समझने, सीखने व जिज्ञासा की भी कमी हो, यह आवश्यक नहीं है।

जॉन होल्ट की पुस्तक "इनस्टेड ऑफ एजुकेशन" के (हिन्दी अनुवाद) श्री सुशील जोशी द्वारा अनूदित तथा एकलव्य, भोपाल द्वारा प्रकाशित 'शिक्षा के बजाय' की पंक्तियों में से कुछ अंश उद्धृत करना चाहूँगी।

"कई शिक्षक जो खुद को आमूल परिवर्तनवादी कहते हैं, अक्सर मुझसे कहते हैं, "मुझे स्कूलों से नफ़रत है और मैं वहाँ उन्हें बदलने जा रहा हूँ।"

ऐसे लोग शायद ही कुछ बदल पाते हों। संभावना यही है कि वे गुस्से, हताशा और निराशा से आधे पागल हो जाएँगे। स्कूलों में उनके तौर-तरीकों से ही लोग समझ जाते हैं कि वे कोई साधारण-सा और सूझबूझ भरा सुझाव भी देते हैं तो उसे सरसरी तौर पर ही खारिज कर दिया जाता है। अत: हमें यह समझने की आवश्यकता है कि हमें स्कूलों को नहीं, स्वयं को बदलना है।

जॉन होल्ट के अनुसार- अपने छात्रों के प्रति ईमानदार रहो, उनमें से कुछ को स्कूल की समस्याओं से जूझने में मदद कर सको और अपने काम में थोड़ा बदलाव ला सको, इतना करना भी शायद आसान नहीं होगा।

हमारे देश में स्कूलों की समस्या साधनों व साध्य दोनों की है। लेकिन, साधनों के इंतजार में बैठे रह कर हम साध्य को भी ताक पर नहीं रख सकते। साध्य का संबंध केवल बेहतर पठन कार्यक्रमों से नहीं है। इसका संबंध इंसानों के प्रति विशेष रूप से बच्चों की आवश्यकताओं, रुचियों के प्रति एक अलग नज़रिए, अलग सोच से है। बच्चे के सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक परिवेश को समझकर हम अपने को बेहतर ढंग से क्रियान्वित कर सकते हैं।

अभी हाल ही में राँची व उसके आस-पास के गाँवों में शिक्षा के क्षेत्र में काम कर रही एक स्वैच्छिक संस्था के कर्मचारियों से बातचीत का अवसर मिला। जो मुद्दे विशेष रूप से उभर कर आए वह थे:

- बच्चे जिस कक्षा में पढ़ रहे हैं पढ़ाई में उससे कहीं पीछे हैं, अर्थात् दूसरी कक्षा में पढ़ने वाले बच्चे को अभी अक्षर ज्ञान भी ढंग से नहीं है। आश्चर्य हुआ जब तीसरी, चौथी व पाँचवीं कक्षा के बच्चों में से बीस बच्चों को ढूँढ़ पाना भी मुश्किल हुआ जो अच्छी तरह से पढ़ सकते हों।
- कई बच्चे व परिवारों की मुख्य रुचि पढ़ने में नहीं, अपितु अवकाश के दौरान मिलने वाले भोजन 'मिड-डे-मील' में रहती है। मिड-डे-मील के बाद आधा स्कूल छँट जाता है।

ऊपर दिए गए उदाहरण में समस्या साधन की नहीं, साध्य की है। यदि पढ़ाई रोचक, जीवंत व मानवीय हो तो.....? तो क्या बच्चे तब भी स्कूल छोड़ कर जाना चाहेंगे?

केवल कक्षा में ही बैठकर पढ़ाने के बजाय बच्चों को फील्ड में ले जाकर उनके साथ प्रयोग करना भी आवश्यक है। जैसे, बच्चों को पेड़-पौधों से दोस्ती कराने हेतु बाग-बगीचे में ले जाना, पुलिस स्टेशन, पोस्ट ऑफिस, बैंक, रेलवे स्टेशन को दिखाना उनकी कार्यप्रणाली को स्तर के अनुसार समझना तथा व्यावहारिक

ज्ञान अर्जित करना आदि। परंतु, दुर्भाग्यवश अभी भी स्कूलों में शिक्षा का परंपरागत रूप ही क्रियान्वित है।

शिक्षा में संदर्भयुक्त अच्छी पाठ्यसामग्री व चित्रों का भी महत्वपूर्ण योगदान है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि बच्चे के सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक परिवेश को जाने बिना अच्छी पाठ्यसामग्री भी विकसित नहीं की जा सकती।

अतः बच्चे के परिवेश को समझकर ही एक आदर्श शिक्षाशास्त्री बच्चे को न सिर्फ शब्द ज्ञान, जोड़ कर उनका दोबारा प्रयोग कर पाना, अपितु पढ़ने का आनंद लेना भी सिखा पाएगा। विपरीत स्थिति में यदि हम इसी प्रकार बिना सोचे-समझे बच्चों पर पढ़ाई का बोझ लादते चले जाएँगे तो पढ़ाई उबाऊ व बोझिल हो जाएगी। ऐसे में यकीनन एक दिन झरना और उसके साथी या तो स्कूल छोड़ कर चले जाएँगे अथवा रोते रहेंगे।

❑❑❑